प्रो० सलोनी
हिन्दी विभाग
वीमेंस कॉलेज,
समस्तीपुर

स्नातक द्वितीय खण्ड
अनिवार्य राष्ट्रभाषा हिन्दी पत्र
(हिन्दीतर भाषा-भाषियों के लिए)
(B A II हिन्दी 50 अंक)

संजीविनी की संक्षिप्त कथा वस्तु

कविवर आरसी प्र. सिंह द्वारा रचित खण्ड काव्य ~~काव्य~~ प्रसिद्ध पौराणिक आख्यान 'कच-देवयानी प्रसंग पर आधारित है। महाकाव्य जहाँ जीवन के विविध आयामों को समेटता चलता है वहीं खण्ड काव्य एक ~~कथा~~ कथा को ही मुख्य आधार बना कर चलता है। गौण कथाओं की यहाँ वैसी संभावना नहीं रहती। अतः 'संजीविनी' में मूल या आधिकारिक कथा 'कच-देवयानी' की ही है जिसका आख्यान बड़ी निपुणता से निर्वाह किया गया है।

कथा का आरंभ देवासुर संग्राम की कथा से होता है। अमर देवता जो स्वयं की विजय के प्रति आश्वस्त थे, संग्राम में दानवों की स्थिति देख कर विचलित हो जाते हैं। मारे गए दानव फिर से जीवित हो जाते हैं और उसी बल के साथ। यह स्थिति देवों के लिए निश्चय ही चिंताजनक बन जाती है। प्रथम सर्ग में चिंता का मूल विषय यही है जिसका निराकरण, देवगुरु बृहस्पति 'संजीविनी' की उपादेयता बताते हैं। असुर गुरु शुक्राचार्य संजीवनी विद्या के ज्ञाता हैं जिसके फलस्वरूप वे दानवों को पुनर्जीवन प्रदान करते हैं। यह स्थिति देवों की विजय पर प्रश्नचिह्न तो लगाता ही है, स्थिति की गंभीरता को भी व्यक्त करता है। गुरु बृहस्पति इसके निदान में शुक्राचार्य से यह विद्या सीखना ~~हेतु देवताओं~~ ही इसका एकमात्र उपाय बताते हैं।

द्वितीय सर्ग में कच इस कार्य हेतु स्वयं को प्रस्तुत करता है सभी देवगण उसे मना करते हैं। असुरों के देश में जाकर उनके गुरु से शिक्षा पाना मानो मौत के मुँह में ही जाना था। ... कच कहता है

मातृभूमि के लिए स्वर्ग सुख जीवन दान करूंगा मैं।
सुर होने के कारण अर्पित अपने प्राण करूंगा मैं।

उसके हठ के आगे सभी को झुकना पड़ता है और कच अपने महान उद्देश्य 'संजीवनी संप्राप्ति' के लिए अलकापुरी से प्रस्थान करता है। कथा का वास्तविक आरंभ यहीं से प्रारंभ होता है जब वह अपने कर्तव्यपथ की ओर कदम रखता है। तृतीय सर्ग में कथा का विकास होता है जब वह फलप्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होकर जहाँ वह शुक्राचार्य के आश्रम में पहुँच कर अपनी ओजस्विता शीलता और विनय से आचार्य को प्रभावित कर देता है अंत में कच को अपना शिष्य बना लेने आचार्य ने संजीवनी विद्यादान देने हेतु स्वीकृति दे देते हैं। आश्रम में गुरु से पहले गुरु पुत्री देवयानी से उसका परिचय होता है और दोनों ही एक दूसरे से प्रभावित होते हैं। कच के व्यक्तित्व से सभी प्रभावित हैं। देवयानी जो गुरु शुक्राचार्य के मोह का कारण है, इसलिए कच के अनुराग से भी शुक्राचार्य आश्वस्त रहते हैं और वे ने स्वयं कार्यों के [illegible] का [illegible] होता है। चतुर्थ सर्ग के [illegible] पश्चात [illegible] होता है। [illegible] की फलप्राप्ति की [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] जाता है वह [illegible] का [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है।

परन्तु गुरु शुक्राचार्य इसका पता लगाकर संजीवनी विद्या से उसे जीवित कर देते हैं, घात लगाए बैठे असुर पुनः उसे मार डालते हैं और गुरुवर उसे फिर जीवित कर देते हैं। तीसरी बार असुर ऐसा प्रयास करते हैं कि वह पुनः जीवित न हो पाए और उसे मारने के बाद उसका भस्म पेय में मिलाकर गुरुवर को पिला देते हैं। अब फलप्राप्ति की प्रत्याशा धूमिल पड़ने लगती है क्योंकि कच ही शेष नहीं रहा। यह जानकर गुरु क्रोधाभिभूत हो जाते हैं एवं अपने पेट में ही कच को संजीवनी विद्या सिखाने का संकल्प लेते हैं।

छठे सर्ग में इसी निर्णय के साथ सभी बाधाएं दूर हो जाती हैं और फलागम निश्चित हो जाता है इस सर्ग के अंत में ~~कच~~ संजीवनी विद्या का प्रयोग कर गुरु ~~उसे जीवित गुरु का उदर चीर कर बाहर आता~~ उसे जीवित करते हैं और वह उनका उदर चीर कर बाहर आता है एवं संजीवनी विद्या का प्रयोग कर शुक्राचार्य को जीवित कर देता है। इस प्रकार जिस हेतु के लिए कच ने अलकापुरी से प्रस्थान किया था, संजीवनी ~~[illegible]~~ संसिद्धि के साथ वह पूर्ण होता है। वस्तुतः कह सकते हैं कि उसे फल की प्राप्ति होती है। सातवें एवं आठवें सर्ग में देवयानी का प्रणय-निवेदन मात्र है जिसे ठुकरा कर अंतिम एवं नवें सर्ग में कच संजीवनी को लेकर स्वर्ग पहुंचता है। घर-घर में उसका प्रचार करता है विद्यादान देता है। वस्तुतः इसे खण्डकाव्य का भरतवाक्य कह सकते हैं।

कथानक की दृष्टि से इसमें कोई मौलिक उद्भावना नहीं है लेकिन प्रस्तुति ऐसी है कि कौतूहल कोशा बना रहता है और आगे क्या होगा यह पाठक के मन में कौंधता रहता है। उसे हमेशा

नवीनता का आभास होता है। वह दानवपुरी गया ही है संजीवनी विद्या लाने पर जब विभिन्न और बाधाओं चुनौतियों के बाद उसे प्राप्त होती है तो स्वाभाविक होता है। आख्यान से यह पहले से ही विदित है परन्तु कच को बार-बार मर कर जीवित होना है। देवयानी की व्याकुलता हमें भी बेचैन कर देती है। तात्पर्य यह है कि पुरानी कथा का निर्वाह इस नाटक में और कौशल के ताने-बाने से किया गया है आकर्षण उत्तरोत्तर बढ़ता ही जाता है।

'संजीवनी' में प्रस्तुत आख्यान कोमल जैसे भी प्रसंग आए हैं उन्हीं के अनुरूप शब्दों का चयन किया गया है और तदनुरूप वातावरण निर्मित किया गया है। एक गुरु को जैसा चाहिए 'योग्य शिष्य'। कच के व्यक्तित्व को कवि ने ऐसा ढाला है कि शुक्राचार्य जैसे गुरु भी उसे पाकर धन्य हो उठते हैं। जिस सहजता से कच एक सहस्र वर्षों का ब्रह्मचर्य शिरोधार्य करता है एवं उसका निर्वहण करता है वह भी धन्य है। अंत में जब देवयानी कच के प्रति प्रणय निवेदन करती है तो ऐसी भावुक भावनाओं के अनुकूल ही पृष्ठभूमि में सुरम्य प्रकृति का वर्णन है।

कथावस्तु पौराणिक भले ही है किन्तु वह समकालीन परिप्रेक्ष्य में भी उतनी ही वरेण्य है। यहाँ संजीवनी के प्रतीक के रूप में कवि, हमारे भीतर प्रेरणा, साहस, उत्साह सच्चरित्रता और सदाचार की स्थापना करने की चेष्टा की गई है। कच का चरित्र वस्तुतः देशभक्त का चरित्र है। इसमें एक ओर देशप्रेम, त्याग, बलिदान और पराक्रम की गूंज है तो दूसरी ओर विद्या की उपासना, साधना एवं तपस्या की एकाग्र निरन्तरता भी है। इसमें स्वदेश और जन्मभूमि के प्रति अपार निष्ठा व्यक्त की गयी है।

कच मूलतः विद्याभ्यास के लिए गया है। उसे स्वर्ग का सुख छोड़ना पड़ता है। गुरु की सेवा करनी पड़ती है। ब्रह्मचर्य का पालन करना पड़ता है। यह आदर्श चरित्र है जो संसार के सभी प्रलोभनों को ठुकराकर एकमात्र विद्या को ही चरम लक्ष्य मानकर अग्रसर होता है।

संजीविनी जीवन का संचार करती है, जगत का कल्याण करती है। आरसी प्र. सिंह के शब्दों में "यदि ऐसी कोई महती शक्ति किसी में है तो वह सत्पुरुषों की वाणी में है। सत्पुरुष या सत् कवि की वाणी वह संजीविनी है जो मृतकों में भी नवजीवन का संचार कर देती है। . . . . जिस विद्या से हमारी वाणी में वह अपराजिता शक्ति आती है उसे चाहे हम किसी भी संज्ञा से अभिहित क्यों न करें, अपने मूल रूप में वह संजीवनी ही है।"

खण्डकाव्य संजीविनी भी इसी कल्याण भावना से युक्त होकर समाज को आदर्श की स्थापना के लिए प्रेरित करती है।